



मीडिया से लेकर सिनेमा तक भाषाई परिवर्तन

प्रा.डॉ.शेख शरफोद्दीन फक्रोद्दीन

हिंदी विभागाध्यक्ष सहयोगी प्रोफेसर
कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,
बदनापूर, जि. जालना (महाराष्ट्र)

सार (Abstract)

मीडिया, सिनेमा और भाषा आधुनिक समाज के तीन ऐसे महत्वपूर्ण स्तंभ हैं जो व्यक्ति, समाज और संस्कृति के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। भाषा संचार का आधार है, मीडिया उस संचार का माध्यम है तथा सिनेमा भाषा और दृश्यात्मक अभिव्यक्ति का सशक्त रूप है। वर्तमान वैश्वीकरण और डिजिटल युग में इन तीनों का संबंध अत्यंत गहरा हो गया है। मीडिया और सिनेमा केवल मनोरंजन के साधन नहीं रह गए हैं, बल्कि वे सामाजिक चेतना, सांस्कृतिक मूल्यों, राजनीतिक विचारधाराओं और भाषाई विकास को प्रभावित करने वाले प्रभावी उपकरण बन चुके हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में मीडिया, सिनेमा और भाषा के पारस्परिक संबंध, उनके सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषाई प्रभावों का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास में भाषा का सर्वोच्च स्थान है। भाषा के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान, ज्ञान का संरक्षण तथा संस्कृति का संवहन संभव होता है। आधुनिक युग में मीडिया और सिनेमा ने भाषा को नए आयाम प्रदान किए हैं। समाचार पत्र, रेडियो, दूरदर्शन, इंटरनेट, सोशल मीडिया तथा फिल्मों ने भाषा को जन-जन तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मीडिया ने जहाँ भाषा को सरल, प्रभावशाली और व्यापक बनाया है, वहीं सिनेमा ने भाषा को भावनात्मक एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है।

भारतीय समाज बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक समाज है। यहाँ हिंदी, मराठी, बंगाली, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, उर्दू सहित अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। मीडिया और सिनेमा ने इन भाषाओं के विकास के साथ-साथ इनके पारस्परिक आदान-प्रदान को भी बढ़ावा दिया है। आज फिल्मों के संवाद, गीत, विज्ञापन और डिजिटल सामग्री आम जनजीवन की भाषा का हिस्सा बन चुके हैं।

मीडिया का स्वरूप एवं भाषा

मीडिया का अर्थ है—ऐसा माध्यम जो सूचना, विचार, ज्ञान और मनोरंजन को समाज तक पहुँचाए। आधुनिक मीडिया को मुख्यतः प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और न्यू मीडिया में विभाजित किया जाता है।

प्रिंट मीडिया में समाचार पत्र, पत्रिकाएँ और पुस्तकें शामिल हैं। इन माध्यमों ने हिंदी भाषा के विकास में ऐतिहासिक योगदान दिया है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय हिंदी पत्रकारिता ने राष्ट्रीय चेतना का निर्माण किया।

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में रेडियो, दूरदर्शन और समाचार चैनल आते हैं। रेडियो ने शुद्ध एवं स्पष्ट हिंदी के प्रसार में योगदान दिया, जबकि दूरदर्शन ने हिंदी को राष्ट्रीय स्तर पर लोकप्रिय बनाया।



न्यू मीडिया में इंटरनेट, सोशल मीडिया, यूट्यूब, ब्लॉग, पॉडकास्ट तथा ओटीटी प्लेटफॉर्म शामिल हैं। इस माध्यम ने भाषा को अधिक गतिशील, संवादात्मक और वैश्विक स्वरूप प्रदान किया है।

सिनेमा और भाषा का संबंध

सिनेमा दृश्य एवं श्रव्य कला का समन्वित रूप है। फिल्मों में भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं होती बल्कि चरित्र निर्माण, सांस्कृतिक पहचान तथा सामाजिक यथार्थ को प्रस्तुत करने का प्रमुख साधन भी होती है।

हिंदी सिनेमा ने हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में अभूतपूर्व योगदान दिया है। फिल्मों के संवाद, गीत और मुहावरे जनभाषा का हिस्सा बन जाते हैं। उदाहरण के लिए, अनेक फिल्मी संवाद आज सामान्य बोलचाल में प्रयुक्त होते हैं। सिनेमा में क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग भारतीय भाषाई विविधता को सम्मान देता है। आज की फिल्मों में हिंदी के साथ अंग्रेजी, उर्दू, पंजाबी, मराठी, भोजपुरी तथा अन्य भाषाओं का मिश्रित प्रयोग सामान्य हो गया है। इससे भाषाओं के बीच संवाद बढ़ा है।

मीडिया और सिनेमा का भाषाई प्रभाव

मीडिया और सिनेमा ने हिंदी भाषा को आधुनिक, सरल और व्यवहारिक बनाया है। नई शब्दावली का निर्माण हुआ है तथा अनेक विदेशी शब्द हिंदी में सहज रूप से सम्मिलित हो गए हैं। दूसरी ओर, अत्यधिक अंग्रेजी मिश्रण के कारण शुद्ध हिंदी के प्रयोग में कमी भी देखी जाती है।

विज्ञापनों की भाषा आकर्षक, संक्षिप्त और प्रभावशाली होती है। सोशल मीडिया ने भाषा को संक्षिप्त, त्वरित और प्रतीकात्मक बना दिया है। इमोजी, संक्षिप्त शब्द और मिश्रित भाषा (हिंग्लिश) का प्रयोग तेजी से बढ़ा है।

समाज और संस्कृति पर प्रभाव

मीडिया और सिनेमा समाज में सामाजिक परिवर्तन के महत्वपूर्ण साधन हैं। वे महिला सशक्तिकरण, शिक्षा, पर्यावरण, लोकतंत्र, स्वास्थ्य तथा मानवाधिकार जैसे विषयों पर जनजागरण करते हैं। फिल्मों और मीडिया के माध्यम से विभिन्न संस्कृतियों का आदान-प्रदान होता है।

हालाँकि कभी-कभी हिंसा, अश्लीलता, उपभोक्तावाद तथा रूढ़ धारणाओं के प्रचार के कारण समाज पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है। इसलिए मीडिया और सिनेमा की सामाजिक जिम्मेदारी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

डिजिटल युग में भाषा, मीडिया और सिनेमा

ओटीटी प्लेटफॉर्म, यूट्यूब और सोशल मीडिया ने भाषा के स्वरूप को बदल दिया है। आज वेब सीरीज़ और डिजिटल फिल्मों में स्थानीय बोलियों तथा क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग बढ़ा है। इससे भाषाई विविधता को नया मंच मिला है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence), मशीन अनुवाद और डिजिटल तकनीक ने भाषा को वैश्विक स्तर पर पहुँचाने का कार्य किया है। अब किसी भी भाषा की सामग्री विश्वभर में उपलब्ध हो सकती है।

निष्कर्ष

मीडिया, सिनेमा और भाषा एक-दूसरे के पूरक हैं। भाषा के बिना मीडिया और सिनेमा की कल्पना संभव नहीं है, जबकि मीडिया और सिनेमा भाषा के प्रचार, प्रसार और विकास के सबसे प्रभावशाली माध्यम हैं। इन तीनों ने समाज में नई चेतना, सांस्कृतिक समन्वय और भाषाई विकास को गति प्रदान की है। डिजिटल युग में इनका महत्व



और अधिक बढ़ गया है। आवश्यकता इस बात की है कि मीडिया और सिनेमा भाषा की शुद्धता, सांस्कृतिक विविधता और सामाजिक उत्तरदायित्व का संतुलित रूप से पालन करें।

पहले लोग अखबारों को पढ़कर, दूरदर्शन को देखकर भाषा सीखते थे या कहीं सुधार करते थे। ये मान्यता थी कि जिस भाषा और जिन शब्दों में खबरें छपती हैं वे शुद्ध होती हैं, बोलचाल में होती हैं, सहज होती हैं। यही बात सूचनाओं को लेकर भी था कि जो अखबार में छप गया वो सही है। उसे अदालतों में सबूत के तौर पर पेश किया जाता रहा है।

अखबारों और दूरदर्शन के प्रति ये धारणा बहुत पुरानी हो गई है। अब हम ये गारंटी नहीं ले सकते कि अखबार हमारी भाषा सुधारेगा। अखबारों और दूरदर्शनों (सभी न्यूज चैनलों) का भाषाई स्तर काफी गिरा है। और इस गिरावट में सबसे बड़ा सहभागी टेलीविजन मीडिया है यानी हमारे न्यूज चैनल। न्यूज चैनलों ने न सिर्फ भाषा के स्तर पर गिरावट पैदा की है बल्कि सूचना के स्तर पर भी काफी भ्रम पैदा किया है। न्यूज चैनल जिन मास्टर शब्दों का प्रयोग करते हैं उसके गलत मायने निकलने की आशंका ज्यादा होती है। जैसे-**हत्यारा प्रोफेसर !** अथवा **हत्यारा प्रोफेसर?** इन दोनों शब्दों का कतई अर्थ नहीं कि प्रोफेसर हत्यारा है। परन्तु अस्सी परसेंट न्यूज चैनल देखनों वालों को विस्मयादिबोधक और प्रश्नवाचक चिह्न पर का मतलब नहीं पता- तो वे यही अर्थ ग्रहण कर लेते हैं कि प्रोफेसर हत्यारा है। कई बार जब लोगों से बात करो तो यही कहते हैं कि फलां प्रोफेसर हत्यारा है, टीवी वाले दिखा रहे थे।

इस प्रकार न्यूज चैनल भाषा के स्तर पर, सूचना के स्तर पर भ्रम फैलाते हैं। टेलीविजन मीडिया का ज्यादा से ज्यादा मास्टर शब्द, प्रश्नवाचक या विस्मयादि बोधक चिह्न वाले ही होते हैं। सामान्य पढ़े लिखे लोगों या फिर तकनीकी साक्षरों को भी समझ नहीं आता। टेलीविजन का मास्टर शब्द, मास्टर भ्रम फैला देता है।

टेलीविजन की वजह से क्षेत्रीय बोलियों का महत्व भी कम होता जा रहा है। टीवी पर प्रस्तोता जो भाषा बोलता है, ऐसा लगता है कि वही राष्ट्रीय भाषा है। क्षेत्रीय बोली बोलने वालों को अपराध बोध लगता है कि वो अभी भी क्षेत्रीय बोली बोल रहे हैं।

क्षेत्रीय बोलियां लुप्त होती जा रही हैं। खड़ी बोली हिंदी भी विशुद्ध नहीं रह गई है। हिंदी न्यूज चैनलों में पूरी तरह से हिंगलिश चल रहा है। अब तो वही टेलीविजन भाषा मास्टर भाषा बनती जा रही है। पहले साहित्यिक शब्द प्रबुद्ध होने की पहचान देते थे पर अब तो सबकुछ गायब होता जा रहा है।

जिसे पहले साहित्यिक भाषा कहा जाता था अब तो भाषा के गड़बड़ाइजेशन की वजह से लुप्त होती जा रही है। भावों को वहन करने वाले अच्छे शब्द गायब होते जा रहे हैं। क्षेत्रीय शब्द लुप्त हो रहे हैं। कहने को हिंदी प्रगति पर है पर हिंदी प्रगति पर नहीं बल्कि हिंदी, इंगलिश का चोला ओढ़ने को मजबूर है। इसके लिए जिम्मेदार मीडिया ही है।

पहले जो लोग मीडिया में आते थे भाषा और विषय सम्बंधी ज्ञान से सम्पन्न होते थे। समाचार पत्रों के सम्पादक बड़े विद्वान होते थे। परन्तु अब संपादक के पद पर कारोबारी बैठ गए हैं और उनके मातहत काम करने वाले उसके कारोबार को बढ़ाने वाले लेबर। ऐसा जब तक चलता रहेगा भाषा के परिष्कृत होने की संभावना कम ही है।

एक दौर में हिंदी भाषा के रचनाकारों को हिंदी सिनेमा उद्योग के द्वारा तिरस्कार भी झेलना पड़ा। प्रेमचंद, वृन्दावन लाल वर्मा, अमृतलाल नागर के लेखों और संस्मरणों से ये बात जाहिर होती है कि हिंदी सिनेमा में भाषाई संस्कृति के दिवालियापन से ये लोग दुखी थे। इस संबंध में प्रेमचंद के महत्वपूर्ण लेख 'सिनेमा और जीवन' में प्रेमचंद लिखते



हैं कि "अगर हिंदी सिनेमा अपने आदर्श को सामने रखकर अपने चित्रों की सृष्टि करता तो वह आज संसार की सबसे बलवान संचालक शक्ति होता, मगर खेद है कि इसे कोरा व्यवसाय बनाकर हमने उसे कला के ऊंचे आसन से खींचकर ताड़ी या शराब की दुकान की सतह तक पहुंचा दिया है"।

हिंदी साहित्यकार सिनेमा के व्यवसायीकरण से परेशान थे और इसके उद्योग में स्वयं को असहज महसूस करते थे। परंतु हिंदी भाषा के रचनाकारों ने हिंदी में सिनेमा समीक्षा और आलोचना को नए आयाम प्रदान किए। अज्ञेय के सम्पादन में निकलने वाला साप्ताहिक पत्र 'दिनमान' इसका एक उदाहरण है। ये एक ऐसा पत्र था जो हिंदी सिनेमा को मात्र एक बाजार का उत्पाद बनने में कड़ा विरोध करता था। हिंदी भाषा के अपने पाठकों के लिए दुनिया भर की महत्वपूर्ण फिल्मों की समीक्षाएं इस पत्र में छपा करती थीं। हिंदी भाषा के इस पत्र ने कई लोगों को सिनेमा अध्ययन के लिए प्रेरित किया। एक ओर जहां अंग्रेजी के पत्र अनावश्यक उत्साह भरने वाली सूचना से भरे होते थे। वहीं इस पत्र ने हिंदी में गहरे सिनेमाई चिंतन को प्रतिपादित किया। उदाहरण के लिए एक लोकप्रिय फिल्म शोले की आलोचना के कुछ अंश आपके समक्ष प्रस्तुत हैं "शोले फिल्म न होकर एक सामाजिक घटना हो गयी है। हिंसा को उदात्त बनाकर फिल्म व्यक्तिगत प्रतिशोध की भावना को सार्वजनिक मान्यता दिलाने की पहल करती है। खलनायक की हिंसा जितनी क्रूर है उतनी नायक की भी। त्वरित भावना का इतना खतरनाक नकदी भुगतान किसी भी फूहड़ फिल्म से ज्यादा हानिकारक है"। जहां एक ओर अंग्रेजी के पत्र पत्रिकाएँ शोले की सफलता और उसकी तकनीक पर लहालोट हो रहे थे। वहीं हिंदी का ये पत्र सिनेमा को मानवीय दृष्टि से देखने के लिए लोगों को प्रेरित कर रहा था।

वर्तमान समय में बदलाव देखने को मिलता है। इंटरनेट के आने से लेखन, पठन, वितरण की समग्र स्वाधीनता का उदय हुआ है। सही मायनो में ये अभिव्यक्ति की आजादी का दौर है जहां थोड़ी सी साक्षरता के आधार पर करोड़ों लोगों तक अपनी बात पहुंचाई जा सकती है। हिंदी सिनेमा भी इससे अछूता नहीं है। ओटीटी के आने से वितरण प्रणाली मुक्त हुई है। साठ के दशक से जिस मुक्त वितरण प्रणाली और विकेंद्रीकरण की संकल्पना की जा रही थी वो आज पूर्ण होती दिख रही है। इसी के कारण से आज स्टार सिस्टम को चुनौती मिली है। हिंदी फिल्म उद्योग विकेंद्रित हो रहा है। अब कहानियों के केंद्र में हिंदी भाषी क्षेत्र हैं। यदि ओटीटी न होता तो बिहार से निकले हुए पंकज त्रिपाठी, और राजस्थान से निकले हुए इरफान खान अंतरराष्ट्रीय सितारे न होते। इनके संस्मरणों में हिंदी साहित्य का प्रभाव इनके ऊपर साफ देखने को मिलता है। पंकज त्रिपाठी कई बार खुल के अपने अभिनेता होने का श्रेय 'फणीश्वर नाथ रेणु' के साहित्य को देते हैं। यदि ओटीटी न होता तो 'पंचायत' और 'गुल्लक' जैसी वेब सिरीज हमारे सामने न आई होती। हजारों करोड़ों के इस उद्योग में आज हिंदी साहित्य में रुचि रखने वाले हिंदी भाषी रचनाकारों का महत्वपूर्ण योगदान है। अनुवाद की दृष्टि से भी ये उद्योग आगे बढ़ रहा है। डबिंग और सबटाइटल के कारण आज एक अच्छी दृश्य-श्रव्य सामग्री भाषा की सीमा से मुक्त हो गयी है। असमिया भाषा की फिल्म को हिंदी में या हिंदी भाषा की फिल्म को तेलुगू में देखा जा सकता है। इसके पीछे मात्र आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ही नहीं बल्कि हिंदी भाषा के अनुवादकों की भी मेहनत है।

**निष्कर्ष :**

मीडिया, सिनेमा और भाषा एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हैं। मीडिया लोगों तक जानकारी पहुँचाता है, सिनेमा विचारों को दृश्य रूप देता है, और भाषा इन दोनों का माध्यम है। सिनेमा केवल शब्दों पर निर्भर नहीं होता, बल्कि कैमरा एंगल, ध्वनि और संपादन (Editing) के जरिए अपनी एक अलग 'सिनेमाई भाषा' बनाता है।

संदर्भ (References)

1. बच्चन सिंह – हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास।
2. डॉ. नागेंद्र – भाषा और संचार।
3. सुधीश पचौरी – मीडिया विमर्श।
4. रामचंद्र वर्मा – हिंदी भाषा और साहित्य।
5. विनोद तिवारी – जनसंचार माध्यम और हिंदी।